श्री षट्खण्डागम/श्रुतपंचमी विधान

रचयिता

पण्डित अभयकुमार जैन, जैनदर्शनाचार्य

देवलाली

-: प्रकाशक :-

श्री 108 आचार्य कुन्दकुन्द वीतराग विज्ञान मण्डल

बड़ा फुहारा, जबलपुर (म.प्र.) फोन - +91 92000 99200

प्रथम संस्करण - 7700 प्रतियाँ : श्रुतपंचमी पर्व, 8 जून 2019
न्यौछावर राशि : 12/- रुपये (पुनः प्रकाशन हेतु)
प्राप्ति स्थान -

- **पूज्य श्री कानजी स्वामी स्मारक ट्रस्ट**
  कहान नगर, लाम रोड,
  देवलाली, नासिक (महा.) 0253 2491044
- **तीर्थधाम सिद्धायतन**
  श्री गुरुदत्त कुन्दकुन्द कहान दि. जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट
  मु. पो. द्रोणगिरि, तह. बड़ा मलहरा
  जिला-छतरपुर, म. प्र. +91 99776 14254

प्रस्तुत विधान के प्रकाशन/वितरण सहयोगी

11000/- श्रीमती ज्ञप्ति-राहुल जैन, वाशी-मुम्बई
5000/- स्व. श्यामबाई एवं स्व. किशनचन्दजी की स्मृति में
श्रीमती रोली-ज्ञायक जैन, देवलाली
5000/- स्व. भूरीबाई एवं स्व. फूलचन्द जैन की स्मृति में
श्रीमती रोली-ज्ञायक जैन, देवलाली
5000/- श्री अशोकजी चानेकर, देवलाली

अनुक्रमणिका

आवश्यक मन्त्र	6
विनय पाठ	7
पूजा पीठिका	8
आचार्य धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलि पूजन	11
श्री श्रुतपंचमी विधान	17
श्री वीरशासन जयन्ती पूजन	30
श्री पंच बालयति जिन-पूजन	35
शान्ति पाठ	39

मुद्रण व्यवस्था - प्री एलविल सन (संजय शास्त्री), जयपुर +91 95092 32733

प्रकाशकीय

आध्यात्मिक सत्पुरुष पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी द्वारा प्रदत्त तत्त्वज्ञान से प्रेरित, लोकप्रिय प्रवचनकार एवं अध्यात्मरसिक कवि पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री द्वारा नव-रचित श्री श्रुतपंचमी विधान प्रकाशित करते हुए हम अत्यन्त हर्ष का अनुभव कर रहे हैं। लघु विधानों की शृंखला में उनके द्वारा लिखा गया यह चौथा विधान है।

इससे पूर्व उनके द्वारा 20-20 पृष्ठ के समयसार, प्रवचनसार एवं तत्त्वार्थसूत्र विधान एवं पंचदिवसीय विधानों में प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड़ एवं तत्त्वार्थसूत्र विधान भी प्रकाशित हो चुके हैं; जो तीर्थधाम सिद्धायतन, जबलपुर, मेरठ, छिंदवाड़ा आदि अनेक स्थानों पर आयोजित हो चुके हैं।

पण्डित अभयकुमारजी द्वारा रचित गीतों, पद्यानुवादों एवं पूजन-विधानों में काव्य-कला के साथ-साथ उनका संतुलित चिन्तन और आध्यात्मिक रस भी झलकता है, जो अध्यात्मरसिकों द्वारा बहुत सराहा जाता है। अप्रासंगिक गीतों, उपदेश शैली एवं कर्तृत्व पोषक भावों का तिरोभाव करके वे पूजन-विधान की मूल परंपरा को विकसित करने का सराहनीय कार्य कर रहे हैं।

मूल विषय पर आधारित छन्द रचना करके भेदज्ञान एवं स्वानुभूति आदि अनेक आध्यात्मिक भावों से भरपूर भक्तिपरक पंक्तियों के माध्यम से पूजन-भक्ति की मूल परंपरा को प्रोत्साहित करना पण्डित अभयकुमारजी की रचनाओं की प्रमुख विशेषता है तथा यही इनका एकमात्र उद्देश्य है। उन्होंने विराम चिह्नों के प्रयोग द्वारा छन्दों का अधिकतम भाव स्पष्ट करने का भरपूर प्रयास किया है।

जबलपुर नगर में पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी द्वारा प्रवाहित अध्यात्मगंगा का प्रवाह अनेक वर्षों से निरन्तर बह रहा है, जिसे स्व. बाबू फूलचन्दजी (सब जज) के नेतृत्व में सन् 1987 से वीतराग विज्ञान मण्डल

की स्थापना द्वारा औपचारिक रूप प्राप्त हुआ। वर्तमान में नगर के मध्य में स्थित श्री महावीर स्वामी दिगम्बर जैन मन्दिर में दैनिक पूजन-स्वाध्याय, पाठशाला आदि के माध्यम से सैकड़ों मुमुक्षु भाई-बहिन लाभ लेते हैं। इस जिनालय की भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा जनवरी सन् 2000 में सम्पन्न हुई है।

अध्यात्मरसिक सरल व्यक्तित्व के धनी पण्डित राजेन्द्रकुमारजी एवं पण्डित अभयकुमारजी इसी नगरी के गौरव हैं, जो अपनी रचनाओं एवं आकर्षक प्रवचनों के कारण देश-विदेश में विख्यात हैं। पण्डित राजेन्द्रजी के वात्सल्य पूर्ण नेतृत्व में ब्र. श्रेणिकजी, ब्र. मनोजजी, पण्डित विरागजी शास्त्री, पण्डित अभिनयजी शास्त्री, पण्डित श्रेयांसजी शास्त्री आदि अनेक युवा प्रवचनकार स्व-पर हित में संलग्न हैं।

मण्डल द्वारा प्रतिवर्ष बाल शिक्षण शिविर का आयोजन एवं राजेन्द्रजी विरचित भजन-पूजन का संग्रह, बोध कथाएँ आदि अनेक कृतियों का प्रकाशन हो चुका है। इसी शृंखला में पण्डित अभयकुमारजी विरचित यह नवीनतम कृति प्रकाशित करने का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ है।

उनके मन में और भी अनेक पूजन-विधान तरंगित हो रहे हैं, जो यथासमय सहज रूप से प्रकट होंगे। प्रस्तुत विधान की टाइप सैटिंग एवं शुद्ध मुद्रण व्यवस्था करने के लिए श्री संजय शास्त्री, जयपुर के प्रति हम आभार व्यक्त करते हैं।

आशा है, सभी लोग इन रचनाओं के माध्यम से भक्ति एवं स्वाध्याय का लाभ लेते हुए आत्मकल्याण के पथ पर अग्रसर होंगे।

भवदीय

समस्त ट्रस्टीगण

श्री 108 आचार्य कुन्दकुन्द वीतराग विज्ञान मण्डल, जबलपुर

अहोभाग्य!

पूजन-विधानों की शृंखला में प्रस्तुत कृति के रूप में श्रुताराधना का अवसर पाकर मैं अत्यन्त गौरव और प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ।

गत वर्ष अक्टूबर में जयपुर में आयोजित शिविर के अवसर पर आत्मार्थी भाई श्री मनोजजी, मुजफ्फरनगर वालों ने षट्खण्डागम की पूजा लिखने का अनुरोध किया, जिसमें छहों खण्डों के अलग-अलग अर्घ्य भी हों। उस समय तो विशेष दृढ़ निश्चय नहीं हो पाया, परन्तु जब उन्होंने दो-तीन बार और आग्रह किया तो विचार-तरंगें उठने लगीं कि उसकी रूप-रेखा कैसी होगी?

पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी के अनुपम उपकार के फलस्वरूप पंच परमागम एवं अन्य आध्यात्मिक ग्रन्थ तो मेरे श्रद्धा-ज्ञान में समा चुके हैं, परन्तु प्रथम श्रुतस्कन्ध में मेरी अपेक्षित गति नहीं हो पाई। षट्खण्डागम का नाम-मात्र का ही परिचय है। इस निमित्त से ग्रन्थ एवं ग्रन्थकर्ता आचार्य भगवन्तों के बारे में कुछ विशेष जानने का अवसर मिला, इसे भी मैं अपना बड़ा सौभाग्य समझता हूँ।

भाई संजय शास्त्री (बड़ामलहरा), जयपुर के अनुरोध से आचार्य धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलि पूजन भी लिखी गई, जिसमें गुणधर आचार्य एवं वीरसेनाचार्य के लिए भी अर्घ्य समाविष्ट हो गये हैं। ज्ञातव्य है कि संजय के अनुरोध से ही तीन वर्ष पूर्व कुन्दकुन्दाचार्य पूजन एवं शान्ति पाठ का जन्म हुआ। उनका आग्रह पूजा-पीठिका लिखने का भी है, परन्तु अन्य रचयिता की जो रचना मुझे भा रही हो, उसकी पुनरावृत्ति करने का मेरा मन तब तक नहीं होता, जब तक कि कोई नवीन विचार उत्पन्न न हो रहे हों।

अतः इस कृति में जिनेन्द्र अर्चना में समागत प्रचलित पूजा-पीठिका ही रखी गई है। हाँ, विनय पाठ के रूप में मंगल दशक का समावेश इसकी नवीन विशेषता है।

परिशिष्ट के रूप में दो वर्ष पूर्व मेरठ में लिखी गई सावन वदी एकम को की जाने योग्य वीरशासन जयन्ती पूजन भी इसमें प्रथम बार प्रकाशित हो रही है तथा समाज को विशेष रूप से प्रिय पंच बालयति पूजन भी दी गई है।

पूजन-विधान के बारे में सोचते-लिखते समय जो भक्ति-रसमय आनंद-तरंगें उछलती हैं, वही मेरी पर्यायगत उपलब्धि है। यही वृत्ति प्रवचनों के प्रति भी है। फिर भी अधिकतम लोग इसका लाभ लें - यह विकल्प भी रोक नहीं पाता।

आशा है, शेष जीवन निर्बाध रूप से इसी प्रकार स्व-पर कल्याणकारी कार्यों में व्यतीत होता रहेगा।

- अभयकुमार जैन, जैनदर्शनाचार्य
देवलाली-नासिक

आवश्यक मन्त्र

यन्त्राभिषेक करने का मंत्र

ॐ ह्रीं भूर्भुवः स्वरिह विघ्नौघवारकं यन्त्रं वयं परिषेचयामः।

अमृत-स्नान करने का मंत्र

ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं द्रावय द्रावय सं सं क्लीं क्लीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय हं सं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सं स्वाहा।

मंगल कलश स्थापना

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादि ब्रह्मणे मतेऽस्मिन् .....मासे.....पक्षे ....तिथौ.....वासरे .....वर्षे इह.....नगरे.....कार्यस्य निर्विघ्नसमाप्त्यर्थं मण्डपभूमिशुद्ध्यर्थं पात्रशुद्ध्यर्थं शान्त्यर्थं पंचरत्नगन्धपुष्पाक्षतादिबीजपूरशोभितं मंगलकलश-स्थापनं करोम्यहं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

रक्षासूत्र बाँधने का मंत्र

ॐ नमोऽर्हते सर्वं रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

विनय पाठ/मंगल दशक

आतम-हित में निमित हैं, नव पद मंगलकार।
विनय सहित वंदन करूँ, होऊँ भव से पार।।1।।

दर्श ज्ञान सुख वीर्य में, विलसें श्री अरहन्त।
लोकालोक निहारते, वन्दूँ जिन भगवन्त।।2।।

द्रव्य-भाव-नोकर्म बिन, अशरीरी भगवान।
गुण अनन्तमय राजते, वन्दूँ सिद्ध महान।।3।।

साधु संघ सिरमौर हैं, संघ नायक आचार्य।
गुण छत्तीस सु-शोभते, साधें निज परमार्थ।।4।।

द्वादशांग से शोभता, है जिनका श्रुतज्ञान।
पढ़ें पढ़ावें अन्य को, पाठक चरण प्रणाम।।5।।

रत्नत्रयमय साधना, से शिवसुख है साध्य।
अट्ठाइस गुण धारते, साधु परम आराध्य।।6।।

अनेकान्त प्रतिपादनी, दिव्यध्वनि ॐकार।
स्याद्वाद वाणी करे, संशय तिमिर निवार।।7।।

त्रिभुवन को सुखकार है, वीतरागमय धर्म।
स्वानुभूति परिणाम में, बसे धर्म का मर्म।।8।।

अन्तर्मुख मुद्रा अहो, परम शान्ति सुख पिण्ड।
निज स्वरूप दरशावते, नमो नमो जिनबिम्ब।।9।।

समवसरण-सम शोभता, जिनमन्दिर सुखकार।
जिनदर्शन से प्राप्त हो, निज दर्शन भव-तार।।10।।

इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

---

1. स्वयं चढ़ाते समय 'क्षिपामि' एवं दूसरों को निर्देश देते समय 'क्षिपेत्' बोलना चाहिए।

पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।।

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः पुष्पांजलिं क्षिपेत्/क्षिपामि।

चत्तारि मंगलं, अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि,
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि,
केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुष्पांजलिं क्षिपेत्/क्षिपामि।

मंगल विधान

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पञ्च-नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते।।1।।

अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः।।2।।

अपराजित-मन्त्रोऽयं, सर्व-विघ्न-विनाशनः।
मङ्गलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मङ्गलं मतः।।3।।

एसो पंच णमोयारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होई मंगलं।।4।।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म-वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम्।।5।।

कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं, मोक्ष-लक्ष्मी निकेतनम्।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम्।।6।।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत-पन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।।7।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्/क्षिपामि।

जिनसहस्रनाम अर्घ्य

उदक-चन्दन-तन्दुलपुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मङ्गल-गान-रवाकुले जिन-गृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वाद-नायकमनन्त-चतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघ-सुदृशां सुकृतैकहेतु-
र्जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष मयाऽभ्यधायि।।1।।

स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिन-पुङ्गवाय,
स्वस्ति स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्ज्जितदृङ्मयाय,
स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्भुत-वैभवाय।।2।।

स्वस्त्युच्छलद्विमल-बोधसुधाप्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोकविततैक-चिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय।।3।।

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं,
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्,
भूतार्थ-यज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञम्।।4।।

अर्हत् पुराणपुरुषोत्तम पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव।
अस्मिञ्ज्वलद्विमल-केवल-बोधवह्नौ,
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि।।5।।

ॐ *यज्ञविधिप्रतिज्ञायै जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्/क्षिपामि।*

स्वस्ति मंगल पाठ

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः।
श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः।
श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः।
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः।
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः।
श्रीश्रेयांसः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः।
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः।
श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः।
श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः।
श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः।
श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः।
श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्धमानः।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्/क्षिपामि।

श्रीमद् आचार्यवर धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलि पूजन

स्थापना

(दोहा)

वीर जिनेश्वर को नमूँ, गुरु गौतम उर लाय।
श्री धरसेनाचार्य को बार-बार शिर नाय।।

षट्खण्डागम शास्त्र का परम्परा श्रुत-ज्ञान।
पुष्पदन्त अरु भूतबलि रचना करी महान।।

वीरसेन-जिनसेन ने टीका रची अपार।
पैनी प्रज्ञावन्त जन करें नित्य अवगाह।।

कह न सकूँ इस ग्रन्थ की महिमा मैं मतिमन्द।
भक्ति भाव से उर बसे ग्रन्थ और निर्ग्रन्थ।।

आह्वानन थापन करूँ मुनि चरणन चित लाय।
देव-शास्त्र-गुरु भक्ति अब मुझको मुखर बनाय।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातारः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवराः!
अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्। *(इति आह्वानम्।)*
ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातारः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवराः!
अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। *(इति स्थापनम्।)*
ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातारः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवराः!
अत्र मम सन्निहिताः भवत भवत वषट् । *(इति सन्निधिकरणम्।)*

(जोगीरासा)

धन्य मुनीश्वर परम अहिंसामय परिणति प्रकटाई।
जन्म जरा मृतु क्षय करने की कला हमें सिखलाई।।
श्री धरसेनाचार्य मुनीश्वर रत्नत्रय के धारी।
पुष्पदन्त अरु भूतबलि पद-पंकज ढोक हमारी।।

(12) श्रुतपंचमी विधान

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य सुगन्धित जीवन जीते भव आताप नशाते।
शीतल वचनों को सुन भविजन परम शान्ति सुख पाते।।
श्री धरसेनाचार्य मुनीश्वर रत्नत्रय के धारी।
पुष्पदन्त अरु भूतबलि पद-पंकज ढोक हमारी।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

निज पद में है दृष्टि अखण्डित खण्डित पद नहिं चाहें।
हे अचौर्य व्रतधारी गुरुवर! अक्षय पद आराधें।।श्री..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

परम ब्रह्म-रस-भोगी गुरुवर ब्रह्मचर्य व्रत धारी।
हे निष्काम परम योगी गुरु तुम हो शिवमगचारी।।श्री..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तिल तुष मात्र संग नहिं गुरुवर सुर-पति दास तुम्हारे।
चिदानन्द रस तृप्त गुरु मम क्षुधा-रोग निरवारे।।श्री..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनोगुप्ति के धारी गुरु मम मन-मन्दिर के वासी।
श्रुत-रवि-वचन-किरण से मेरे मोह-तिमिर को नाशी।।श्री..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वचन द्वार से भी पर में नहिं लक्ष्य तुम्हारा जाता।
महा-मौन-धारी गुरु-वचनों में निष्कर्म सुहाता।।श्री..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चंचल चित्त हुआ थिर निज में तन भी निश्चल होता।
गुरु-चरणों में शिवफल पाने मैं निज शीश नवाता।।श्री..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच महाव्रत तीन गुप्ति वैभव अनमोल तुम्हारा।
गुरुवर तव चरणों में बसता है अनर्घ्य पद म्हारा।। श्री...।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री धरसेनाचार्य के लिए अर्घ्य

चौपाई 15 मात्रा (रोम-रोम पुलकित हो जाय...)

धन्य-धन्य धरसेनाचार्य करते निज चैतन्य विहार।
गिरि गिरनार शिखर विख्यात में करते सिद्धों से बात।।
व्याख्याप्रज्ञप्ति अंग का ज्ञान दृष्टिवाद का भी कुछ ज्ञान।
रहे सुरक्षित कैसे ज्ञान चिन्ता गुरु को कृपा-निधान।।
हुआ योग द्वय-मुनि महान उन्हें पढ़ाया निज श्रुत-ज्ञान।
गुरु-चरणों में अर्घ्य चढ़ाय पद-अनर्घ्य दृष्टि में लाय।।

ॐ ह्रीं श्री अंगपूर्वांग-अंशधारि-धरसेनाचार्यदेवाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पुष्पदन्त मुनिराज के लिए अर्घ्य

पुष्पदन्त मुनिराज महान सुरगण पूजित गुरु गुणखान।
श्री धरसेन सुगुरु सन्देश आए मुनि गिरनार प्रदेश।।

स्वयं विवेकी प्रज्ञावन्त किया शुद्ध गुरु का इक मन्त्र।
पाया श्रीगुरु से श्रुत-ज्ञान अनुभव में निज आतम-ज्ञान।।
ज्ञान किया मुनि ने लिपिबद्ध सूत्र एक सौ सतत्तर बद्ध।
गुरु-चरणों में अर्घ्य चढ़ाय पद-अनर्घ्य दृष्टि में लाय।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृ-पुष्पदन्तमुनये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूतबलि मुनिराज के लिए अर्घ्य

भूतबली मुनिराज महान रत्नत्रय भूषित गुण-खान।
पुष्पदन्त संग किया विहार आए गिरि गिरनार मँझार।।
स्वयं विवेकी प्रज्ञावन्त शुद्ध कर दिया गुरु का मंत्र।
गुरु धरसेन समीप निवास प्राप्त किया श्रुतज्ञान विलास।।
वह श्रुतज्ञान किया लिपिबद्ध छह हजार सूत्रों में बद्ध।
गुरु-चरणों में अर्घ्य चढ़ाय पद-अनर्घ्य दृष्टि में लाय।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृ-भूतबलिमुनये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वीरसेन आचार्य के लिए अर्घ्य

वीरसेन आचार्य महान आर्यनन्दि गुरु थे गुण-खान।
धवल बुद्धिधारी सुविशाल अठ सौ सोलह सन शुभ काल।।
अक्टूबर महिना दिन आठ धवला टीका रची सुपाठ।
श्लोक बहत्तर सहस प्रमाण धवला में निर्मल श्रुतज्ञान।।
जयधवला भी रची महान बीस सहस्र श्लोक प्रमाण।
गुरु-चरणों में अर्घ्य चढ़ाय पद-अनर्घ्य दृष्टि में लाय।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धटीकाकार-वीरसेनाचार्यदेवाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री गुणधर आचार्य के लिए अर्घ्य

गुणभूषण गुणधर आचार्य परिणति पाप-रहित अविकार।
श्रुतस्कन्ध प्रथम-दातार सर्वप्रथम श्रुत-रचनाकार।।
ग्रन्थ कसायपाहुड़ दातार निष्कषाय परिणति व्यापार।
पेज्जदोसपाहुड़ भी नाम वीतराग परिणति सुखधाम।।
दो सौ तेतिस गाथा-बद्ध जयधवला टीका उपलब्ध।
गुरु-चरणों में अर्घ्य चढ़ाय पद-अनर्घ्य दृष्टि में ल्याय।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धटीकाकार-वीरसेनाचार्यदेवाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(मरहठा माधवी)

श्री धरसेनाचार्य सुगुरु विचरण करते निज ध्यान में।
अंग पाँचवें और बारवें के आंशिक श्रुतज्ञान में।।
कैसे हो यह ज्ञान सुरक्षित चिन्ता थी आचार्य को।
दक्षिण में सन्देशा भेजा भेजो दो मुनिराज को।।

पुष्पदन्त अरु भूतबलि दो मुनि आए गिरनार पर।
धैर्य बुद्धि की हुई परीक्षा सफल हुए मुनिवर प्रवर।।
मुनिवर की अनुपम प्रतिभा लख शिक्षा दी आचार्य ने।
छह खण्डों में किया सुरक्षित उन दोनों मुनिराज ने।।

प्रथम ग्रन्थ लिपिबद्ध हुआ था ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी अपूर्व।
आत्मसाधनारत मुनित्रय का हम सब पर उपकार अपूर्व।।
कलिकाल के अन्त समय तक वर्तेगा जो ज्ञान-प्रवाह।
आगम अरु अध्यात्म ग्रन्थ का यह सब संतों का उपकार।।

(दोहा)

वीरसेन आचार्य ने, टीका लिखी महान।
धवला जयधवला अहो, करे जगत गुणगान।

जिनवर अरु आचार्य का, है महान उपकार।
अर्घ्य समर्पित भक्ति से, नमता बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथमश्रुतस्कन्धप्रदातृभ्यः श्री धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिमुनिवरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

नमूँ प्रथम स्कन्ध-श्रुत, निर्मल हो श्रुतज्ञान।
जिसमें हो शोभित सदा, अनुपम केवलज्ञान।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

सिद्ध स्तुति

अशरीरी-सिद्ध भगवान, आदर्श तुम्हीं मेरे।
अविरुद्ध शुद्ध चिद्घन, उत्कर्ष तुम्हीं मेरे।।टेक।।
सम्यक्त्व सुदर्शन ज्ञान, अगुरुलघु अवगाहन।
सूक्ष्मत्व वीर्य गुणखान, निर्बाधित सुखवेदन।।
हे गुण अनन्त के धाम, वन्दन अगणित मेरे।।1।।

रागादि रहित निर्मल, जन्मादि रहित अविकल।
कुल गोत्र रहित निष्कुल, मायादि रहित निश्छल।।
रहते निज में निश्चल, निष्कर्म साध्य मेरे।।2।।

रागादि रहित उपयोग, ज्ञायक प्रतिभासी हो।
स्वाश्रित शाश्वत-सुख भोग, शुद्धात्म-विलासी हो।।
हे स्वयं सिद्ध भगवान, तुम साध्य बनो मेरे।।3।।

भविजन तुम-सम निज-रूप, ध्याकर तुम-सम होते।
चैतन्य पिण्ड शिव-भूप, होकर सब दुख खोते।।
चैतन्यराज सुख-खान, दुख दूर करो मेरे।।4।।

श्री षट्खण्डागम/श्रुतपंचमी विधान

मंगलाचरण

(अनुष्टुप्)

श्रीमत्परम-गम्भीर-स्याद्वादामोघलांछनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्।।1।।

(शार्दूलविक्रीडित)

सः श्रीमान् धरसेन-नाम-सुगुरुः श्री जैनसिद्धान्त-सद्-
वार्द्धिर्धुर्धुर-पुष्पदन्त-सुमुनिः श्रीभूतपूर्वो बलिः।
एते सन्मुनयो जगत्त्रय-हिताः स्वर्गामरैरर्चिताः
कुर्युर्मे जिनधर्मकर्मणि मतिं स्वर्गापवर्गप्रदे।।2।।

(अनुष्टुप्)

श्रीवीरसेन इत्याप्त-भट्टारक-पृथु-प्रथः।
स नः पुनातु पूतात्मा वादि-वृन्दारको मुनिः।।3।।

धवलां भारतीं तस्य कीर्तिं च शुचिनिर्मलाम्।
धवलीकृत-निःशेष-भुवनां तां नमाम्यहम्।।4।।

भूयादावीरसेनस्य वीरसेनस्य शासनम्।
शासनं वीरसेनस्य वीरेसन-कुशेशयम्।।5।।

सिद्धानां कीर्तनादन्ते यः सिद्धान्तप्रसिद्ध-वाक्।
सोऽनाद्यनन्तसन्तानः सिद्धान्तो नोऽवताच्चिरम्।।6।।

पद्यानुवाद (हरिगीतिका)

श्रीयुत परम गम्भीर लक्षण स्याद्वाद अमोघ है।
जैन शासन त्रिजगपति का जगत में जयवन्त है।।1।।

सिद्धान्त-सागर श्री गुरु धरसेन-पद-पंकज नमूँ।
मुनिवर धुरन्धर पुष्पदन्त-रु भूतबलि-पद उर धरूँ।।
ये सभी मुनिवर त्रिजग हितकर सुर-गुणों से वन्द्य हैं।
स्वर्ग-शिव-प्रद धर्मरूपी कर्म में मम मति धरें।।2।।

आप्तवत् सुप्रसिद्ध हैं जो वादियों में श्रेष्ठ हैं।
वे वीरसेन पवित्र आत्मा मुझे भी निर्मल करें।।3।।
भारती जिनकी धवल है कीर्ति भी निर्मल अहो।
धवल करती सकल जग को उसे मेरा नमन हो।।4।।

वीरसेनाचार्य तक शासन जिनेश्वर वीर का।
रचना मुनीश्वर वीर शासन श्री महावीर का।।5।।
सिद्ध के गुणगान से जो प्राप्त होता अन्त में।
सिद्धान्त कहते हैं उसे यह वचन है चिरकाल से।।6।।

इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

जिनवाणी स्तुति

धन्य-धन्य वीतराग वाणी, अमर तेरी जग में कहानी।
चिदानंद की राजधानी, अमर तेरी जग में कहानी।।टेक।।
उत्पाद-व्यय अरु ध्रौव्य स्वरूप, वस्तु बखानी सर्वज्ञ भूप।
स्याद्वाद तेरी निशानी, अमर तेरी जग में कहानी।।1।।
नित्य-अनित्य अरु एक अनेक, वस्तु कथंचित् भेद-अभेद।
अनेकांतरूपा बखानी, अमर तेरी जग में कहानी।।2।।
भाव शुभाशुभ बंधस्वरूप, शुद्ध-चिदानन्दमय मुक्तिरूप।
मारग दिखाती है वाणी, अमर तेरी जग में कहानी।।3।।
चिदानंद चैतन्य आनन्द धाम, ज्ञानस्वभावी निजातम राम।
स्वाश्रय से मुक्ति बखानी, अमर तेरी जग में कहानी।।4।।

श्री षट्खण्डागम पूजन

स्थापना

(दोहा)

वीर प्रभु गौतम गुरु को कर जोरि प्रणाम।
द्वादशांग श्रुत प्रकट हो वर्ते ऐसा ज्ञान।।

भाव सहित पूजा करूँ, षट्खण्डागम सार।
भेद-प्रभेदों में लखूँ, प्रभो! समय का सार।।

धन्य दिवस श्रुत पंचमी हुआ सुश्रुत अवतार।
सम्यक् श्रुत-आराधना कर होऊँ भव-पार।।

ॐ ह्रीं श्री षट्खण्डागमस्वरूप-प्रथम-श्रुतस्कन्ध! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
(इति आह्वानम्।)

ॐ ह्रीं श्री षट्खण्डागमस्वरूप-प्रथम-श्रुतस्कन्ध! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
(इति स्थापनम्।)

ॐ ह्रीं श्री षट्खण्डागमस्वरूप-प्रथम-श्रुतस्कन्ध! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। *(इति सन्निधिकरणम्।)*

(हरिगीतिका)

सिद्धान्त ज्ञान-सुनीर निर्मल, मोह-मल क्षालित करे।
जिन-चरण में अर्पित करें, भवि जीव भव-सागर तरें।।
षट्खण्ड आगम ग्रन्थ पढ़, चेतन-अखण्ड स्वपद लखूँ।
धरसेन गुरुवर पुष्पदन्त-रु भूतबलि-पद युग नमूँ।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-श्रुतस्कन्ध-स्वरूप-षट्खण्डागमग्रन्थाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धान्त ज्ञान-सुगन्ध मलयज प्रभु-चरण अर्पित करूँ।
शुद्धात्म-आश्रित ज्ञान पाकर भवातप सब क्षय करूँ।।
षट्खण्ड आगम ग्रन्थ पढ़, चेतन-अखण्ड स्वपद लखूँ।
धरसेन गुरुवर पुष्पदन्त-रु भूतबलि पद युग नमूँ।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-श्रुतस्कन्ध-स्वरूप-षट्खण्डागमग्रन्थाय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धान्त सूत्र अखण्ड मिथ्या-वादि मद खण्डित करें।
प्रभु-चरण में श्रद्धा समर्पित कर अखण्डित पद लहें।। षट्..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-श्रुतस्कन्ध-स्वरूप-षट्खण्डागमग्रन्थाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धान्त-सुरभित-सुमन भविजन-भ्रमर-चित्त रमावते।
निष्काम श्रुत-आराधना कर काम-भाव विनाशते।।षट्..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-श्रुतस्कन्ध-स्वरूप-षट्खण्डागमग्रन्थाय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धान्त-रस के रसिकजन को क्षुधा नहिं पीड़ित करे।
प्रभु भक्ति-रस आस्वाद कर भवरोग शीघ्र शमित करे।।षट्..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-श्रुतस्कन्ध-स्वरूप-षट्खण्डागमग्रन्थाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धान्त-दीप-प्रकाश में भवि स्व-पर भेद पिछानते।
प्रभु पद-कमल पूजा करें निज चित्-स्वरूप निहारते।। षट्..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-श्रुतस्कन्ध-स्वरूप-षट्खण्डागमग्रन्थाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धान्त ज्ञान-सुधूप ले ध्यानाग्नि प्रजलित भवि करें।
निष्काम जिनवर-अर्चना कर कर्म-मल सब क्षय करें।।षट्..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-श्रुतस्कन्ध-स्वरूप-षट्खण्डागमग्रन्थाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धान्त-बोध-सुवृक्ष पर कैवल्य-फल निश्चित फलें।
प्रभु! भक्ति निर्वांछक फले भवि सहज चिन्मय सुख लहें।।षट्..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-श्रुतस्कन्ध-स्वरूप-षट्खण्डागमग्रन्थाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धान्त-वैभव द्रव्यश्रुत यह जगत में अनमोल है।
प्रभु! भावश्रुत में भासता निज पद अनर्घ्य अमोल है।।षट्..।।

ॐ ह्रीं श्री प्रथम-श्रुतस्कन्ध-स्वरूप-षट्खण्डागमग्रन्थाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

(दोहा)

गुरु धरसेनाचार्य के चरणों का धरि ध्यान।
पुष्पदन्त अरु भूतबलि को नित करूँ प्रणाम।।

षट्खण्डागम शास्त्र की महिमा चित् में लाय।
द्वादशांग श्रुतज्ञान को पूजूँ अर्घ्य बनाय।।

भक्तिपूर्वक मैं करूँ वर्णन अति संक्षेप।
द्वादशांग श्रुतज्ञान हो मम उर में निक्षेप।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

1

प्रथम खण्ड 'जीवट्ठाण' समन्वित द्वादशांग के लिए अर्घ्य

(वीरछन्द-दोहा)

पहला **जीवट्ठाण** खण्ड है अष्ट-नुयोग द्वार से युक्त।
सत् संख्या अरु क्षेत्र स्पर्शन काल भाव अन्तर से युक्त।।
अल्प बहुत्व और चूलिका नौ भी इसमें कही गईं।
प्रकृति स्थान महा दण्डक त्रय जघन तथा उत्कृष्ट रची।।

सम्यकोत्पत्ति गति आगति का वर्णन इसमें किया गया।
गुणस्थान मार्गणा कथन पद सहस-अठारह में मिलता।।

(दोहा)

श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
जिसके हैं ये भेद सब, वह अभेद चित् धार।।

*ॐ ह्रीं श्री **जीवट्ठाण**समन्वित-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।*

(2)

द्वितीय खण्ड 'खुद्दाबन्ध' समन्वित द्वादशांग के लिए अर्घ्य

खण्ड दूसरा **खुद्दा** अथवा **क्षुल्लक बन्ध** कहा जाता।
ग्यारह अधिकारों में कर्मबन्ध भेदों की महाकथा।।
अंतर काल तथा स्वामित्व-रु भंग विचयत्रय अनुगम द्वार।
द्रव्य क्षेत्र स्पर्शन अधिगम नाना जीव-रु भागाभाग।।
अनुगम-अल्पबहुत्व ग्यारवाँ, जीव कर्म का बन्ध करे।
किन्तु शुद्धनय से यह चेतन कर्मों से नहिं कभी बँधे।।

श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
मैं अबद्धस्पृष्ट हूँ, पद अनर्घ्य अविकार।।

*ॐ ह्रीं श्री **खुद्दाबन्ध**समन्वित-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।*

(3)

तृतीय खण्ड 'बन्ध-स्वामित्व विचय' समन्वित द्वादशांग के लिए अर्घ्य

खण्ड तृतीय **बन्ध-स्वामित्व** विचय नाम बुधजन ज्ञाता।
किसे कौन-सी प्रकृति बन्ध होता है अथवा नहिं होता।।

स्वोदय और परोदय बन्धरूप प्रकृति का वर्णन है।
कर्मबन्ध सम्बन्धी सब विषयों का इसमें वर्णन है।।
श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
मैं अबद्धस्पृष्ट हूँ, पद अनर्घ्य अविकार।।

*ॐ ह्रीं श्री **बन्धस्वामित्वविचय**समन्वित-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।*

(4)

चतुर्थ खण्ड 'वेदना' समन्वित द्वादशांग के लिए अर्घ्य

चौथा खण्ड **वेदना** इसमें कृति एवं वेदना कथन।
पाँच शरीरों की संघातन परिशातन कृति का वर्णन।।
नाम थापना द्रव्य ग्रन्थ गणना कारण अरु भाव कहे।
सात भेद से कृति का वर्णन किन्तु मुख्य गणना ही है।।
सोलह अधिकारों में वर्णन करें वेदना का आचार्य।
नय निक्षेप नाम अरु द्रव्य क्षेत्र काल प्रत्यय अरु भाव।।
गति स्वामित्व वेदना और अनन्तर सन्निकर्ष परिमाण।
भागाभाग-रु अल्पबहुत्व सहस सोलह पद रचे सुजान।।
श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
अहो! अवेदक मैं सदा, पद अनर्घ्य अविकार।।

*ॐ ह्रीं श्री **वेदनाखण्ड**समन्वित-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।*

(5)

पंचम खण्ड 'वर्गणा' समन्वित द्वादशांग के लिए अर्घ्य

खण्ड पाँचवाँ नाम **वर्गणा** बंधनीय अधिकार प्रधान।
तेइस एवं कर्मबन्ध के योग्य वर्गणा कहीं सुजान।।

और साथ में सोलह अधिकारों में तेरह स्पर्श बखान।
दश प्रकार कर्मों का वर्णन करते ये अधिकार-महान।।
नाम थापना द्रव्य भाव से शील-स्वभाव-प्रकृति वर्णन।
सोलह अधिकारों में करते वीरसेन आचार्य-महान।।
श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
मैं चिन्मय निष्कर्म हूँ, पद अनर्घ्य अविकार।।

*ॐ ह्रीं श्री **वर्गणाखण्ड**समन्वित-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।*

6

षष्ठ खण्ड 'महाबन्ध' समन्वित द्वादशांग के लिए अर्घ्य

भूतबलि भट्टारक ने ही **महाबन्ध** का रचा विधान।
प्रकृति थिति अनुभाग प्रदेश बंध का किया महा व्याख्यान।।
महा धवल भी कहते इसको मूल नाम सत्कर्म कहा।
अष्टादश अनुयोग द्वार से वर्णन इसमें किया गया।।
श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
मैं चेतन निर्बन्ध हूँ, पद अनर्घ्य अविकार।।

*ॐ ह्रीं श्री **महाबन्ध**समन्वित-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।*

7

कसायपाहुड़ समन्वित द्वादशांग के लिए अर्घ्य

ज्ञानप्रवाद पूर्व की दसवीं वस्तु महा अधिकार महान।
तीजा प्राभृत **कसायपाहुड़** का गुणधराचार्य को ज्ञान।।
पेज्ज-दोष पाहुड़ भी कहते राग-द्वेष वर्णन विस्तार।
हैं चौबिस अनुयोग द्वार से कहे गए पन्द्रह अधिकार।।

श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
मैं अकषाय स्वरूप हूँ, पद अनर्घ्य अविकार।।

*ॐ ह्रीं श्री **कषायपाहुड**समन्वित-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।*

(8)

पंच परमागम के लिए अर्घ्य

(हरिगीतिका-दोहा)

कलिकाल में सर्वज्ञवत् गुरु कुन्दकुन्दाचार्य हैं।
शिवमग प्रकाशक पंच परमागम सु-रचनाकार हैं।।
नव तत्त्व में गत आत्मज्योति है समय के सार में।
ज्ञान-सुख अरु ज्ञेय का वर्णन सु-प्रवचनसार में।।
मार्ग एवं मार्ग-फल वर्णन नियम के सार में।
षट् द्रव्य और पदार्थ नौ व्याख्या पंचास्तिकाय में।।
अष्टपाहुड़ में विविध वर्णन किया शिवमार्ग का।
ये पंच परमागम दिखाते मार्ग शिव-सुख प्राप्ति का।।

श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
शिव-रमणी रमनार हूँ, पद अनर्घ्य अविकार।।

*ॐ ह्रीं श्री **पंचपरमागम**समन्वित-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।*

(9)

प्रथमानुयोग के लिए अर्घ्य

(हरिगीतिका-दोहा)

मन्दबुद्धि जीवों को यह प्रथमानुयोग जिनवर कहते।
पौराणिक पुरुषों के जीवन की घटना वर्णन करते।।

पुण्य-पाप का फल बतलाकर उसे दुखद बतलाते हैं।
वीतरागता सुखदायी कह निज हित रुचि जगाते हैं।।
असद्भूत व्यवहार से ही यह जानन योग्य।
भेदज्ञान की पुष्टि ही, इसमें करने योग्य।।
श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
निज चैतन्य स्वभाव ही, पद अनर्घ्य अविकार।।

ॐ ह्रीं श्री 'जिनमुखोद्भूत-प्रथमानुयोगशास्त्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(10)

करणानुयोग के लिए अर्घ्य

सूक्ष्मबुद्धि जीवों को यह करणानुयोग जिनवर कहते।
कर्मप्रकृतियों से बन्धन अरु उदय आदि वर्णन करते।।
पर-आश्रित परिणाम जीव को दुखदायी बतलाते हैं।
तीन लोक रचना का भी श्री गुरुवर ज्ञान कराते हैं।।
असद्भूत व्यवहार से ही यह जीव स्वरूप।
ज्ञान-राग की भिन्नता, मात्र प्रयोजनभूत।।
श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
द्रव्य भाव नोकर्म बिन, पद अनर्घ्य अविकार।।

ॐ ह्रीं श्री 'जिनमुखोद्भूत-करणानुयोगशास्त्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(11)

चरणानुयोग के लिए अर्घ्य

साधक जीवों के जीवन में होता है कैसा व्यवहार।
इसका वर्णन करते गुरुवर यह चरणानुयोग सुखकार।।

श्रावक और श्रमण की बाह्य-क्रिया इसमें गुरु बतलाते।
किन्तु मात्र उपचरित धर्म है यह रहस्य गुरु समझाते।।

जीव क्रिया करता, कहे असद्भूत व्यवहार।
करता है निज भाव का, कहता नय परमार्थ।।

श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
निष्क्रिय चिन्मय तत्त्व ही, पद अनर्घ्य अविकार।।

ॐ ह्रीं श्री 'जिनमुखोद्भूत-चरणानुयोगशास्त्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(12)

द्रव्यानुयोग के लिए अर्घ्य

नौ पदार्थ छह द्रव्य बताता यह द्रव्यानुयोग सुखकार।
भेदज्ञान अरु वीतरागता ही शिव-पथ कहते आचार्य।।
मलिन और निर्मल पर्यायों का भी इसमें कथन किया।
पर्यायों से भिन्न त्रिकाली ध्रुव दृष्टि में बसा लिया।।

आत्मज्ञान ही ज्ञान है, द्वादशांग का सार।
चिन्मय ज्ञायक भाव ही, मात्र समय का सार।।

श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
ज्ञानमात्र निज भाव ही, पद अनर्घ्य अविकार।।

ॐ ह्रीं श्री 'जिनमुखोद्भूत-द्रव्यानुयोगशास्त्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

(जोगीरासा)

परिणामों को धवल बनाने धवलत्रयी पहचानूँ।
इक शत बासठ सहस श्लोक हैं इसकी महिमा जानूँ।।

सोलह खण्डों में धवला टीका षट्खण्डागम की।
श्लोक बहत्तर सहस रचे जय हो जय जिन आगम की।।1।।

सोलह खण्डों में जयधवला है कषायपाहुड़ की।
वीरसेन जिनसेन सूरि की रचना साठ हजारी।।
भूतबली कृत महाबन्ध ही महाधवल कहलाता।
तीस सहस श्लोक रचे जो सूक्ष्म बुद्धि पढ़ पाता।।2।।

उनतालिस भागों में ये सब ग्रन्थ आज हैं मिलते।
नय-व्यवहार कथन से ज्ञानी परमारथ को लखते।।
परमारथ के ज्ञान-हेतु हस्तावलम्ब व्यवहारा।
अतः बहुत कथनी इस नय की कहे जिनागम सारा।।3।।

परमागम के सारभूत निज ज्ञायक को पहचानूँ।
उसमें ही अपनापन करके भेदों को बस जानूँ।।
वीतरागता की पोषक है श्री जिनवर की वाणी।
है चारों अनुयोग कथन की शैली निज कल्याणी।।4।।

श्रुतभक्ति का अर्घ्य ले, शोधूँ श्रुत का सार।
मोक्ष-महल में आइये, प्रिय चैतन्य कुमार।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(हरिगीतिका)

षट्खण्ड-आगम ग्रन्थ की महिमा जगत-विख्यात है।
यह प्रथम श्रुतस्कन्ध जिसमें जैनशासन व्याप्त है।।
ज्यों चक्रवर्ती जीतते षट्खण्ड को पुरुषार्थ से।
त्यों जानकर षट् द्रव्य भविजन सुख लहें निज अर्थ से।।1।।

धरसेन गुरु कुछ अंग एवं पूर्व के ज्ञाता हुए।
गिरनार गिरि पर शुद्ध आतम के परम ध्याता हुए।।
गुरु भूतबलि अरु पुष्पदन्त महामुनि निर्ग्रन्थ थे।
सूक्ष्म प्रज्ञा के धनी वे पथिक थे शिवपंथ के।।2।।

श्रुतज्ञान पा धरसेन गुरु से उभय मुनिवर धन्य थे।
षट्खण्ड-आगम ग्रन्थ रचना कर निजात्म अनन्य थे।।
वीरसेन महामुनि टीका रची धवला महा।
जिसका पठन कर धवल-धी से भव्य सुख पाते अहा।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत-द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

श्रुत-सेवनमय अर्घ्य यह, भविजन को सुखकार।
जिन आगम अभ्यास ही, पद अनर्घ्य दातार।।

(इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।)

*जाप्य मन्त्र - **ॐ ह्रीं श्रीसम्पूर्णद्वादशांगाय नमः।***

जिनवाणी स्तुति

महिमा है, अगम जिनागम की।।टेक।।
जाहि सुनत जड़ भिन्न पिछानी, हम चिन्मूरति आतम की।।1।।
रागादिक दुख कारन जानैं, त्याग बुद्धि दीनी भ्रम की।।2।।
ज्ञान-ज्योति जागी उर अन्तर, रुचि बाढ़ी पुनि शम-दम की।।3।।
कर्मबंध की भई निरजरा, कारण परम पराक्रम की।।4।।
'भागचन्द' शिव-लालच लाग्यो, पहुँच नहीं है जहँ जम की।।5।।

श्री दिव्यध्वनि/वीरशासन जयन्ती पूजन

स्थापना (मरहठा माधवी)

धन्य धन्य सावन बदि एकम वाणी खिरी महान है।
वीर प्रभु के शुभ-शासन का हुआ सुमंगल गान है।।
केवलज्ञान हुआ प्रभुजी को समवसरण रचना हुई।
छ्यासठ दिन पश्चात् प्रभु की मंगलमय वाणी खिरी।।

सप्त तत्त्व अरु नव पदार्थ में हम सब चेतन द्रव्य हैं।
दर्श-ज्ञान-चारित्र एक ही सच्चे सुख का पंथ है।।
स्वानुभूति में सदा प्रकाशित ज्ञायक आनंद धाम है।
उदित हुआ कैवल्य किरण से सम्यग्ज्ञान महान है।।

(दोहा)

आप्त-वचन दिखला रहे, भविजन को शिवपंथ।
आह्वानन थापन करूँ, नमूँ पंथ निर्ग्रन्थ।।

ॐ ह्रीं श्री ! शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनि! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। *(इति आह्वानम्।)*

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनि! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। *(इति स्थापनम्।)*

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनि! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । *(इति सन्निधिकरणम्।)*

अष्टक

(हरिगीतिका)

ॐकार ध्वनि की भक्ति-जल से मोह का प्रक्षाल कर।
अर्पित करूँ प्रभु-चरण में जन्मादि रोग विनाश कर।।
जयवंत वर्ते वीर-शासन प्रभु! हमारे ज्ञान में।
शिवपंथ शाश्वत है यही नित वर्तता श्रद्धान में।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्-अक्षरी वाणी प्रभु की ताप हरती जगत का।
स्वानुभव शीतल सुधा-रसमय वचन खिरते सदा।।
जयवंत वर्ते वीर-शासन प्रभु! हमारे ज्ञान में।
शिवपंथ शाश्वत है यही नित वर्तता श्रद्धान में।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

स्याद्वाद कौशल से सदा अक्षत सुशासन आपका।
मम ज्ञान-श्रद्धा हो अखंडित नाश कर मिथ्यात्व का।।
जयवंत वर्ते वीर-शासन प्रभु! हमारे ज्ञान में।
शिवपंथ शाश्वत है यही नित वर्तता श्रद्धान में।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

हे वीर! तव निष्काम भक्ति काम-रोग विनाशती।
ये काम-शर अर्पित चरण में ब्रह्म-भाव प्रकाशती।।
जयवंत वर्ते वीर-शासन प्रभु! हमारे ज्ञान में।
शिवपंथ शाश्वत है यही नित वर्तता श्रद्धान में।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वानुभूति-रस भरी वाणी प्रभु की अब सुनूँ।
आनन्द-अमृत पान कर प्रभु! चिर क्षुधा-व्याधि हरूँ।।
जयवंत वर्ते वीर-शासन प्रभु! हमारे ज्ञान में।
शिवपंथ शाश्वत है यही नित वर्तता श्रद्धान में।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! तेरे वचन भी निज-पर प्रकाश सदा करें।
श्रुतज्ञान-दीपक से भविक चिर मोह-तम का क्षय करें।।
जयवंत वर्ते वीर-शासन प्रभु! हमारे ज्ञान में।
शिवपंथ शाश्वत है यही नित वर्तता श्रद्धान में।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु-वचन सौरभ व्याप्त हो त्रयलोक रूपी भवन में।
दुर्गन्ध मिथ्या मतों की कैसे रहे इस सदन में।।
जयवंत वर्ते वीर-शासन प्रभु! हमारे ज्ञान में।
शिवपंथ शाश्वत है यही नित वर्तता श्रद्धान में।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु-वीर-वाणी वृक्ष पर आनंदमय शिवफल फलें।
मैं पुण्य-फल अर्पित करूँ शुद्धात्म ज्ञान सुफल मिलें।।
जयवंत वर्ते वीर-शासन प्रभु! हमारे ज्ञान में।
शिवपंथ शाश्वत है यही नित वर्तता श्रद्धान में।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह स्वानुभूति-रस भरी वाणी महा अनमोल है।
हम भक्ति-अर्घ्य करें समर्पित पर न जाने मोल है।।
जयवंत वर्ते वीर-शासन प्रभु! हमारे ज्ञान में।
शिवपंथ शाश्वत है यही नित वर्तता श्रद्धान में।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

जिनशासन शाश्वत सदा, भविजन को सुखकार।
वही वीर-शासन अहो, वर्ते भरत मँझार।।1।।

(वीरछन्द)

केवलज्ञान हुआ प्रभुजी को किन्तु दिव्यध्वनि नहीं खिरी।
अति आश्चर्य हुआ जग-जन को कैसी है यह अनहोनी।।
अनुपम समवसरण की रचना बारह सभा विराज रही।
प्रभु की अंतर्मुख मुद्रा को आशा भरी निहार रही।।2।।

एक-एक दिन करके पूरे छ्यासठ दिन भी बीत गए।
हुआ इंद्र को भी अति अचरज अब तक प्रभु क्यों मौन रहे।।
झलका अवधिज्ञान में तत्क्षण योग्य शिष्य हो सकता कौन?
ॐकार ध्वनि झेल सके जो द्वादशांग रच सकता कौन?3।।

शिष्य पाँच सौ के गुरु गौतम मिथ्या-मत में पड़े हुए।
किंतु इंद्र इस गौतम में ही महा-योग्यता देख रहे।।
तत्क्षण वेश बना ब्राह्मण का आ गौतम से प्रश्न किया।
काल तीन छह द्रव्य लेश्या की उलझन में मन मेरा।।4।।

काललब्धि आई गौतम की प्रभु की ओर किया प्रस्थान।
मानस्तम्भ निरख जिनवर का गला तुरत मिथ्या अभिमान।।
नमन किया प्रभु को तत्क्षण ही जाग उठा कोई संस्कार।
सर्वारम्भ परिग्रह तज ली दीक्षा वेश-दिगंबर धार।।5।।

धन्य बनी सावन बदि एकम खिरी प्रभु की दिव्यध्वनि।
स्वानुभूतिमय शिवपथ पाकर सारी जगती धन्य बनी।।

अनेकान्तमय वस्तुव्यवस्था जिनशासन में कही गयी।
स्याद्वाद शैली से संशय-विभ्रम-मोह-निशा विघटी।।6।।

(दोहा)

यह अलंघ्य शासन अहो, सदा रहे जयवंत।
प्रज्ञा छैनी से प्रभो! पाऊँ भव का अंत।।7।।

ॐ ह्रीं श्री शासननायक-तीर्थंकरवर्धमान-मुखोद्भूतदिव्यध्वनये अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनध्वनि सुनकर हे प्रभो, प्रकटे दर्शन-ज्ञान।
अर्घ्य समर्पित चरण में, पाऊँ आनंद धाम।।8।।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्/क्षिपामि)

हे प्रभो चरणों में तेरे....

हे प्रभो! चरणों में तेरे आ गये;
भावना अपनी का फल हम पा गये।। टेक।।

वीतरागी हो, तुम्हीं सर्वज्ञ हो;
सप्त तत्त्वों के, तुम्हीं मर्मज्ञ हो।
मुक्ति का मारग, तुम्हीं से पा गये;
हे प्रभु! चरणों में, तेरे आ गये।। 1।।

विश्व सारा ही झलकता ज्ञान में;
किन्तु प्रभुवर लीन हैं निज ध्यान में।
ध्यान में निज-ज्ञान को हम पा गये;
हे प्रभु! चरणों में तेरे आ गये।। 2।।

तुमने बताया, जगत् के सब आत्मा;
द्रव्य-दृष्टि से सदा परमात्मा।
आज निज परमात्मा, पद पा गये;
हे प्रभु! चरणों में तेरे आ गये।। 3।।

श्री पंच बालयति जिन-पूजन

स्थापना

(हरिगीतिका)

निज ब्रह्म में नित लीन परिणति से सुशोभित हे प्रभो।
पूजित परम निज पारिणामिक से विभूषित हे विभो।।
अब आओ तिष्ठो अत्र तुम सन्निकट हो मुझमय अहो।
श्री बालयति पाँचों प्रभु को वन्दना शत बार हो।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लि-नेमि-पार्श्व-वीराः पंचबालयतिजिनेन्द्राः! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्। (इति आह्वानम्।)

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लि-नेमि-पार्श्व-वीराः पंचबालयतिजिनेन्द्राः! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। (इति स्थापनम्।)

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लि-नेमि-पार्श्व-वीराः पंचबालयतिजिनेन्द्राः! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्। (इति सन्निधिकरणम्।)

(वीरछन्द)

हे प्रभु! ध्रुव की ध्रुव परिणति के पावन जल में कर स्नान।
शुद्ध अतीन्द्रिय आनन्द का तुम करो निरतन्र अमृत-पान।।
क्षणवर्ती पर्यायों का तो जन्म-मरण है नित्य स्वभाव।
पंच बालयति-चरणों में हो तन-संयोग-वियोग अभाव।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो ! सुगन्धित चेतन प्रभु की परिणति में नित महक रहा।
क्षणवर्ती चैतन्य विवर्तन की ग्रन्थि में चहक रहा।।
द्रव्य, और गुण पर्यायों में सदा महकती चेतन गन्ध।
पंच बालयति के चरणों में नाशूँ राग-द्वेष दुर्गन्ध।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

परिणामों के ध्रुव प्रवाह में बहे अखण्डित ज्ञायक भाव।
द्रव्य-क्षेत्र अरु काल-भाव में नित्य अभेद अखण्ड स्वभाव।।
निज गुण-पर्यायों में जिनका अक्षय पद अविचल अभिराम।
पंच बालयति जिनवर मेरी परिणति में नित करो विराम।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नर्वपामीति स्वाहा।

गुण अनन्त के सुमनों से हो शोभित तुम ज्ञायक उद्यान।
त्रैकालिक ध्रुव परिणति में तुम प्रतिपल करते नित्य विराम।।
इसके आश्रय से प्रभु तुमने नष्ट किया है काम-कलंक।
पंच बालयति के चरणों में धुला आज परिणति का पंक।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हे प्रभु ! अपने ध्रुव प्रवाह में रहो निरन्तर शाश्वत तृप्त।
षट्रस की क्या चाह तुम्हें तुम निज रस के अनुभव में मस्त।।
तृप्त हुई अब मेरी परिणति ज्ञायक में करती विश्राम।
पंच बालयति के चरणों में क्षुधा-रोग का रहा न नाम।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज ज्ञानमय ज्योति प्रज्वलित रहती ज्ञायक के आधार।
प्रभो ! ज्ञान-दर्पण में त्रिभुवन पल-पल होता ज्ञेयाकार।।
अहो ! निरखती मम श्रुत-परिणति अपने में तव केवलज्ञान।
पंच बालयति के प्रसाद से प्रकट हुआ निज ज्ञायक भान।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रैकालिक परिणति में व्यापी ज्ञान-सूर्य की निर्मल धूप।
जिससे सकल-कर्म-मल क्षय कर हुए प्रभो! तुम त्रिभुवन भूप।।
मैं ध्याता तुम ध्येय हमारे मैं हूँ तुममय एकाकार।
पंच बालयति जिनवर ! मेरे शीघ्र नशो अब त्रिविध विकार।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज ज्ञान का ध्रुव प्रवाह फल सदा भोगता चेतनराज।
अपनी चित् परिणति में रमता पुण्य-पाप फल का क्या काज।।
महा मोक्षफल की न कामना शेष रहे अब हे जिनराज।
पंच बालयति के चरणों में जीवन सफल हुआ है आज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम परमभाव की पूजित परिणति में जो करें विराम।
कारण परमपारिणामिक का अवलम्बन लेते अविराम।।
वासुपूज्य अरु मल्लि-नेमिप्रभु-पार्श्वनाथ-सन्मति गुणखान।
अर्घ्य समर्पित पंच बालयति को पंचम गति लहूँ महान।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

पंच बालयति नित बसो, मेरे हृदय मँझार।
जिनके उर में बस रहा, प्रिय चैतन्य कुमार।।

(छप्पय)

प्रिय चैतन्य कुमार सदा परिणति में राजे।
पर-परिणति से भिन्न सदा निज में अनुरागे।
दर्शन-ज्ञानमयी उपयोग सुलक्षण शोभित।
जिसकी निर्मलता पर आतम ज्ञानी मोहित।।
ज्ञायक त्रैकालिक बालयति, मम परिणति में व्याप्त हो।
मैं नमूँ बालयति पंच को, पंचम गति पद प्राप्त हो।।

(वीरछन्द)

धन्य-धन्य हे **वासुपूज्य जिन**! गुण अनन्त में करो विलास।
निज-आश्रित परिणति में शाश्वत महक रही चैतन्य सुवास।।

सत्-सामान्य सदा लखते हो क्षायिक-दर्शन से अविराम।
तेरे दर्शन से निज-दर्शन पाकर हर्षित हूँ गुण-खान।।1।।

मोह-मल्ल पर विजय प्राप्त कर महाबली हे **मल्लि जिनेश**।
निज गुण परिणति में शोभित हो शाश्वत मल्लिनाथ परमेश।।
प्रतिपल लोकालोक निरखते केवलज्ञान स्वरूप चिदेश।
विकसित हो चित् लोक हमारा तव किरणों से सदा दिनेश।।2।।

राजमती तज **नेमि जिनेश्वर**! शाश्वत सुख में लीन सदा।
भोक्ता-भोग्य विकल्प विलय कर निज में निज का भोग सदा।।
मोह रहित निर्मल परिणति में करते प्रभुवर सदा विराम।
गुण अनन्त का स्वाद तुम्हारे सुख में बसता है अविराम।।3।।

जिनका आत्म-पराक्रम लख कर कमठ शत्रु भी हुआ परास्त।
क्षायिक-श्रेणी आरोहण कर मोह-शत्रु को किया विनष्ट।।
पार्श्वप्रभु! तव चरण-युगल में क्यों बसता यह सर्प कहो।
बल अनन्त लखकर जिनवर का चूर कर्म का दर्प अहो।।4।।

क्षायिक दर्शन-ज्ञान-वीर्य से शोभित हैं सन्मति भगवान।
भरत क्षेत्र के शासन-नायक अन्तिम तीर्थंकर सुख-खान।।
विश्व-सरोज-प्रकाशक जिनवर! हो केवल-मार्तण्ड महान।
अर्घ्य समर्पित चरण-कमल में वन्दन **वर्धमान** भगवान।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

पंचम भाव स्वरूप, पंच बालयति को नमूँ।
पाऊँ शुद्ध स्वरूप निज कारण परिणाममय।।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्/क्षिपामि

शान्ति पाठ

(हरिगीतका)

पर-द्रव्य में एकत्व अरु कर्तृत्व के अभिप्राय से।
आकुलित हूँ चिरकाल से नहिं शान्ति पर की आश से।।
राग की ज्वाला निरंतर जल रही पर्याय में।
विकट भव-वन में भ्रमा हूँ विषय-सुख की चाह में।।1।।

नासाग्र दृष्टि शान्त मुद्रा आज लखकर आपकी।
सहज ही सब विलय हों अब वासनाएँ पाप की।।
मैं शान्ति का हूँ पिण्ड आनन्दकन्द ज्ञायक भाव हूँ।
प्रभु-दर्श कर जानूँ स्वयं को मात्र चिन्मय भाव हूँ।।2।।

मैं स्वयं शान्तिस्वरूप हूँ पर्याय में भी शान्ति हो।
श्रद्धान हो सद्ज्ञान हो किंचित् नहीं कुछ भ्रान्ति हो।।
हे नाथ! अब मैं आपके ही चरण-पथ पर बढ़ चलूँ।
आप-सम निज रूप लखकर आप-सी वृत्ति लहूँ।।3।।

सर्व जिनवर शान्तिदायक शान्ति-निर्झर हैं स्वयं।
इस शान्ति-निर्झर में नहायें यही भाते भाव हम।।
अज्ञान-वश अपराध प्रभु! जो ज्ञात या अज्ञात हैं।
करिए क्षमा जिनराजजी अब नशें सब भवताप हैं।।4।।

(दोहा)

पूजन विधि सर्जित हुई, भक्तिभाव में नाथ।
किन्तु विसर्जित अब करूँ, कभी न बिछुड़े साथ।।5।।

करूँ विसर्जन मैं अतः, क्षमा चाहता नाथ।
दर्शन-ज्ञान-चरित्र में, सदा रहे तव साथ।।6।।

(नौ बार णमोकार मन्त्र के माध्यम से पंच परमेष्ठी का स्मरण करें।)

क्षमापना[1]

(वीरछन्द)

अक्षर पद मात्रा स्वर व्यंजन, रेफ आदि की यदि हो भूल।
शास्त्र-सिन्धु में कौन न उलझे, क्षमा करो पाऊँ भव-कूल।।
हे प्रभु! निज-संवेदन लक्षण, भूषित श्रुत-चक्षु द्वारा।
केवलज्ञान-चक्षु से मण्डित, आज आपको देख रहा।।1।।

शास्त्राभ्यास जिनेन्द्र-भक्ति, संगति आर्यों की रहे सदा।
सज्जन का गुणगान करूँ मैं, दोष-कथन नहिं करूँ कदा।।
हित-मित-प्रिय वाणी हो सबसे, आत्म-भावना ही भाऊँ।
गति–अपवर्ग न होवे जब तक, भव-भव में यह वर पाऊँ।।2।।

जिनपथ में रुचि विरति अन्य से, जिनगुण-स्तवन मैं अति लीन।
निष्कलंक निर्दोष भावना, हो मेरी भव-भव में पीन[2]।।3।।

(अनुष्टुप्)

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो, जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्।।
सर्वमंगल–मांगल्यं, सर्वकल्याण–कारकम्।
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयतु शासनम्।।

सुनकर वाणी जिनवर की,
महारे हर्ष हिये न समाय जी।।टेक।।
काल अनादि की तपन बुझानी,
निज निधि मिली अथाह जी।।1।।
संशय, भ्रम और विपर्यय नाशा,
सम्यक् बुद्धि उपजाय जी।।2।।
नर–भव सफल भयो अब मेरो,
'बुधजन' भेंटत पाय जी।।3।।

1. दशभक्ति से साभार 2. पुष्ट